6.1. पुरुषार्थ *(Purushartha)*

'पुरुषार्थ' शब्द दो शब्दों के मेल से बना है—'पुरुष' और 'अर्थ'। इसलिए पुरुषार्थ वह है जो पुरुष के लिए आवश्यक एवं लाभदायक हो। दूसरे शब्दों में "व्यक्ति के कर्मों के लक्ष्य को ही पुरुषार्थ कहा जाता है। जिनके लिए मनुष्य की चेष्टाएँ होती हैं, वे ही उसके पुरुषार्थ हैं।"

भारतीय दृष्टिकोण समन्वयवादी है। जीवन की सभी आवश्यकताओं से इसका संबंध रहता है। यही कारण है कि भारतीय विचारकों ने ऐसे चार आदर्श या साध्य बताए हैं, जो मनुष्य के इहलोक और परलोक दोनों के प्रधान लक्ष्य बन जाते हैं। इन्हीं चारों आदर्शों से प्रेरित होकर मनुष्य के सभी व्यापार होते हैं। चार पुरुषार्थ ये हैं—धर्म (virtue), काम (enjoyment), अर्थ (wealth) और मोक्ष (liberation)। अब हम इन चारों का अलग-अलग संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करते हैं।

(a) **धर्म** (Virtue)—'धर्म' का अर्थ धारण करने योग्य कर्म है। 'धर्म' से यहाँ मनुष्य के उन सभी कर्तव्यों का बोध होता है, जिन्हें शास्त्रों ने सभी मानवीय क्षेत्रों को ध्यान में रखकर निर्धारित किया है। जीवन का धर्ममय होना आवश्यक है। जीवन के सभी क्षेत्रों में कर्तव्यों का समुचित पालन करनेवाला व्यक्ति ही सच्चा धार्मिक व्यक्ति है। धर्म जीवन का एक अंश नहीं है, बल्कि यह संपूर्ण जीवन में व्याप्त है। जीवन में धर्म का अत्यधिक महत्त्व है। अर्थ और काम उसी अंश तक वांछित हैं, जिस हद तक इनसे धार्मिक आचरण में मदद मिलती है।

पाश्चात्य दर्शन में धर्म को 'Religion' कहते हैं। 'Religion' और 'धर्म' (virtue) पर्यायवाची नहीं कहे जा सकते। 'धर्म' का क्षेत्र 'Religion' के क्षेत्र से अधिक व्यापक है। 'Religion' मनुष्य की केवल धार्मिक भावना को संतुष्ट करता है; किंतु धर्म संपूर्ण जीवन को संतुष्ट करता है। शास्त्रों द्वारा निर्धारित कर्तव्य ही धर्म कहे जाते हैं। धर्म निःश्रेयस (मोक्ष) की प्राप्ति का एक महत्त्वपूर्ण साधन है। यह लौकिक और पारलौकिक दोनों प्रकार की सिद्धियों में सहायक है। **डॉ॰ राधाकृष्णन** के शब्दों में, "चारों वर्णों और चारों अवस्थाओं तथा चारों पुरुषार्थों से संबद्ध मनुष्य के निःशेष कर्तव्यसमुदाय को धर्म कहा जाता है।"

मनु ने धर्म के दस लक्षण बताए हैं—धैर्य, क्षमा, इंद्रियनिग्रह, मानसिक संयम, अंतर्बाह्यशुद्धि, अस्तेय, धी, विद्या, सत्य और क्रोध का अभाव। ये मनुष्य के साधारण धर्म हैं, मनुष्य के विशेष धर्म हैं। इनमें वर्णाश्रम-धर्म प्रमुख है। धर्म का ज्ञान होता है? इस प्रश्न के उत्तर में **मनु** का कहना है—"वेद, स्मृति, सदाचार और अपने लिए जो प्रिय हो—ये ही धर्म के चार लक्षण हैं।" वेदों और उपनिषदों में भी धर्म की विशद व्याख्या हुई है।

Scanned with CamScanner

(b) **अर्थ** (Wealth)—अर्थ, धन या संपत्ति जीवन के लिए आवश्यक है। बिना धन के व्यक्ति की आवश्यकताएँ पूरी नहीं हो सकतीं। जीने की प्रवृत्ति जन्मजात है। इसलिए धन का महत्त्व भी अत्यधिक है। आज के भौतिक युग में रुपए-पैसे पर ही सर्वस्व निर्भर है। किसी विद्वान ने ठीक ही कहा है—"जिसके पास धन है, वही कुलीन है, वही पंडित है, श्रुतवान और गुणी है, वही दर्शनीय है और स्वर्ण की भाँति उसमें सभी गुण विद्यमान हैं। संस्कृत का यह श्लोकांश भी धन की महत्ता बतलाता है—'धनाद् धर्मः ततः सुखम्, अर्थात् धन से धर्म होता है और तब सुख मिलता है। **भर्तृहरि** धन को ही सभी गुणों की खान मानते हैं। **चाणक्य** का कथन भी उल्लेखनीय है—"वाणी का लगा हुआ घाव अर्थ से दूर हो जाता है।" इस प्रकार, अर्थ का जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान है।

भारतीय विचारक अर्थ की महत्ता स्वीकार करते हुए भी इसे परमसाध्य नहीं मानते थे। अर्थ अपने-आपमें महत्त्व नहीं रखता। यह तो निःश्रेयस का साधन माना जाता है।

(c) **काम** (Enjoyment)—'काम' को दो अर्थों में प्रयुक्त किया जाता है—सामान्य अर्थ और विशेष अर्थ। सामान्य अर्थ में विषयानुभवजन्य सुख काम है, अर्थात् बाह्य वस्तु जो सुखद प्रतीत हो, उसके अनुभव की इच्छा 'काम' है। काम के अंतर्गत केवल इंद्रियजन्य सुख (sexual pleasure) ही नहीं, बल्कि मानसिक सुख भी आ जाते हैं। किसी सुखप्रद वस्तु की इच्छा काम है, जो चाही जाए। विशेष अर्थ में काम का अर्थ है इंद्रियजन्य सुख (sexual pleasure)।

हिंदू-दर्शन में काम को सदैव बृहत् अर्थ में लिया जाता है। इंद्रिय पर नियंत्रण रखते हुए उन्हें तृप्त करना आवश्यक समझा जाता है। यहाँ इंद्रियों के दमन की बात नहीं कही जाती। इंद्रियों की स्वाभाविक प्रवृत्तियों को कभी कुचलने की सलाह नहीं दी जाती। यौनसुख (sexual pleasure) का भी अपना कम महत्त्व नहीं है। **डॉ० राधाकृष्णन** के शब्दों में, "हिंदूधर्म में यौनजीवन को किसी भी प्रकार अनैतिक नहीं माना गया है" (In Hindu religion, there is nothing unwholesome about the sex life.)। यही कारण है कि हिंदुओं के महान देवता ब्रह्मा, विष्णु, महेश, राम, कृष्ण आदि ने भी वैवाहिक जीवन व्यतीत किया। हिंदूधर्म व्यक्ति की वासनाओं एवं इच्छाओं को नियंत्रित रूप में तृप्त करने का आदेश देता है, किंतु कामवासना में लिप्त न होने की सलाह देता है। राजा जनक इसके ज्वलंत उदाहरण हैं। वे संसार में रहते हुए भी सांसारिकता से ऊपर थे, जिस प्रकार कमल जल में रहकर भी उससे अलग रहता है। इस प्रकार, कामतृप्ति में हमें अपने विवेक को भूलना नहीं चाहिए।

आधुनिक युग में **फ्रॉयड** और उनके अनुयायियों ने भी 'काम' (sex) को बृहत् अर्थ में लिया है और मनुष्य के समस्त व्यापारों का इसे आधार बताया है। भारतीय विचारक 'काम' को परमसाध्य नहीं मानते। यह तो मोक्ष का एक साधन कहा जा सकता है।

(d) **मोक्ष** (Liberation or Salvation)—चौथा और अंतिम पुरुषार्थ मोक्ष है। **चार्वाक** को छोड़कर सभी भारतीय विचारक मोक्ष को जीवन का निःश्रेयस मानते हैं। मोक्ष के स्वरूप और इसकी प्राप्ति के साधनों को लेकर विचारकों में काफी मतभेद पाया जाता है। मोक्ष का सामान्य अर्थ यह है—मोक्ष एक ऐसी अवस्था है, जहाँ दुःखों का पूर्ण अभाव रहता है। कुछ लोगों ने इस अवस्था को केवल दुःखरहित अवस्था कहा है; किंतु कुछ अन्य विचारकों के अनुसार इस अवस्था में विशुद्ध आनंद की प्राप्ति होती है।

मोक्ष के दो प्रकार होते हैं—जीवन्मुक्ति और विदेहमुक्ति। जैन, बौद्ध, सांख्य तथा वेदांत के अनुसार व्यक्ति इसी जीवन में शरीर धारण करते हुए मोक्ष प्राप्त कर सकता है। इसे ही 'जीवन्मुक्ति' कहते हैं। मृत्यु के बाद मिलनेवाले मोक्ष को विदेहमुक्ति कहते हैं।

हिन्दू-विचारक विश्व में दुःख, पीड़ा एवं अपार कष्ट देखकर तिलमिला जाते हैं। ये व्यक्ति को सर्वत्र बंधनग्रस्त पाते हैं। बंधन (bondage) ही दुःख का मूल कारण है। बंधन स्वयं अविद्या या अज्ञान (ignorance) का फल है। इसलिए दुःखों को दूर करने के लिए सर्वप्रथम अज्ञान का नाश आवश्यक है। यही कारण है कि प्रायः सभी भारतीय विचारक अज्ञान का नाश ही बंधन का नाश और मोक्ष की प्राप्ति मानते हैं। इस प्रकार, मोक्ष (liberation) एक ऐसा आदर्श है, जिसकी प्राप्ति होने पर ही व्यक्ति सदा के लिए जन्म-मरण के चक्कर से मुक्त हो जाता है और उसे किसी प्रकार का कष्ट नहीं रहता।

Scanned with CamScanner

अब प्रश्न उठता है कि उपर्युक्त चारों पुरुषार्थों में कौन प्रमुख है और कौन गौण। स्वाभाविक प्रवृत्ति के अनुसार 'काम' का प्रथम स्थान है, तब 'अर्थ' का, तब 'धर्म' का और सबसे अंत में 'मोक्ष' का। साधारण मनुष्य 'काम' और 'अर्थ' को ही जीवन का परमसाध्य मानता है, किंतु, 'काम' और 'अर्थ' का उपयोग 'धर्म' के बिना निंदनीय माना जाता है। धर्म का पालन करते हुए 'काम' और 'अर्थ' का उपभोग करना चाहिए। धर्मविहीन काम और धर्मविहीन अर्थ निंदनीय माने जाते हैं। बिना धर्म के अर्थ और काम को पुरुषार्थ नहीं कहा जा सकता। अर्थ और काम तभी तक पुरुषार्थ हैं जब तक धर्म की नींव पर इनकी इमारत खड़ी है। आदर्श के दृष्टिकोण से मोक्ष ही सर्वप्रमुख पुरुषार्थ है, जिसकी प्राप्ति के अन्य पुरुषार्थ साधनमात्र हैं। इस प्रकार काम, अर्थ और धर्म मोक्षप्राप्ति के साधन कहे जा सकते हैं। किंतु, इसका यह अर्थ नहीं कि इनमें कुछ पुरुषार्थ उच्चकोटि के हैं और कुछ निम्न कोटि के। इनमें प्रत्येक पुरुषार्थ का अपना अलग महत्त्व है। भारतीय विचारक मोक्ष को ही निःश्रेयस या सर्वोच्च आदर्श मानते हैं।

Scanned with CamScanner